IOSR Journal of Humanities and Social Science (IOSR-JHSS)
Volume 31, Issue 1, Series 6 (January, 2026) 39-43
e-ISSN: 2279-0837, p-ISSN: 2279-0845.
www.iosrjournals.org

कर्मठता और लोक-सरोकारों से रची शाश्वत वाणी : संत रैदास का काव्य

डॉ. शालिनी श्रीवास्तव

अतिथि प्रवक्ता (हिंदी साहित्य)
क.मुं. हिंदी और भाषाविज्ञान विद्यापीठ,
डॉ. भीमराव आंबेडकर विश्वविद्यालय, आगरा (भारत)

भक्ति आंदोलन भारतीय साहित्य और सांस्कृतिक इतिहास की एक महत्वपूर्ण घटना है। चौदहवीं शताब्दी में देश जब बड़ी राजनीतिक उथल-पुथल और धार्मिक-सामाजिक टकराहटों से जूझ रहा था तब भक्ति की भाव-धारा ने हताश लोक जीवन को नई उर्जा देने का कार्य किया। ध्यान देना चाहिए कि यह ऊर्जा किसी अदृश्य लोक से प्रकट नहीं हो रही थी बल्कि इसके अंतःस्रोत इसी धरती से प्रकट हो रहे थे। बरसों-बरस से जमी और सड़ी हुई व्यवस्थाओं के प्रतिजन सामान्य का असंतोष जीवन मूल्यों का नया व्याकरण रचने को आतुर था। भाषा, साहित्य और संस्कृति कीजमीन पर सनातन प्रश्नों के कुछ नयेऔर अधिक मानवीय उत्तर खोजने की कोशिश हो रही थी। यह 'कागद की लेखी' से 'आँखिन की देखी' के मुकाबले का समय था। यह तमाम मठों की रंगबिरंगी झंडाबरदारी के सामने शुद्ध आत्मा की उजास और लोक भूमि की मिठास से सिरजे हुए गुरुओं का समय था। इसी गुरु श्रंखला में एक बड़ा और बहुत सम्मानित नाम संत रैदास का है।

रैदास का नाम आते ही एक ऐसे शांत, सरल कर्मयोगी का चित्र उभरता है जो अपनी दैनंदिन जीविका की प्रतिबद्धताओं से जुड़ा रहकर भी इनकी वासनाओं से मुक्त हैं। उनके हाथ में राँपी है लेकिन मन राम में तल्लीन है। मन की शुचिता और दृढ़ता से बढ़कर उनके लिए कुछ भी नहीं। वे अपने भावमय भजनों में सदाचार, परोपकार, विनम्रता और सत्संगकी महत्ता को प्रतिपादित करते है। वे कहते हैं -

कह रैदास तेरी भगति दूरि है, भाग बड़े सो पावै।
तजि अभिमान मेटि आपा पर पिपलिक ह्वै चुनि खावै।

यानी ईश्वर की भक्ति बड़े भाग्य से मिलती है। जो अपना अभिमान त्याग चुका है, अहंकार मिटा चुका है वही इसका अडिकारी हो सकता है। हाथी होकर शक्कर के दानों को नहीं चुना जा सकता। इसके लिए चींटी जैसा होना पड़ेगा।

रैदास का पूरा जीवन काव्य इस अर्थ में प्रेरणादायक है कि इसमें अपने युग की आडंबरी सत्ताओं का बहुत मजबूत लेकिन सविनय प्रतिकार मिलता है। केवल प्रतिकार ही नहीं बल्कि सामाजिक और आध्यात्मिक जीवन की मानवीय गरिमा को खोजने के नये रास्ते भी मिलते हैं।

यह हिंदी की विडंबना ही है कि अपनी साहित्यिक परंपरा से जुड़े संतों, कवियों और गुरुओं और तमाम बड़े नामों के जीवन और कृतित्व से जुड़े तथ्य बहुमुखी और विवादास्पद हैं। रैदास का जीवन भी इसका अपवाद नहीं है। परंपरा के साक्ष्यों और शोध द्वारा उद्घाटित तथ्यों के आधार पर सामान्य रूप से रैदास का जन्म सन 1377 के आस-पास माना गया है. हिन्दू पांचांग के अनुसार यह तिथि माघ शुक्ल पूर्णिमा रविवार की है। जन्म-तिथि के विषय में रैदासी संप्रदाय में यह दोहा शताब्दियों से प्रचलित है -

चौदह सौ तैंतीस की माघ सुदी परदास।
दुखियों के कल्याण हित प्रकटे श्री रैदास।।

रैदास के जीवनवृत्त के साथ-साथ उनके वास्तविक नाम पर भी विवाद है। रैदास साहित्य के अध्येता डॉ. संगमलाल पांडेय के अनुसार - "रविदास के कुल बारह नाम मिलते हैं। यथा - 'रैदास, रयदास, रुइदास, रुईदास, रयिदास, रोहीदास, रोहीतास, रहदास, रामदास, रमादास, रविदास और हरिदास।" लेकिन इनके सर्वाधिक प्रचलित नाम रैदास और रविदास ही हैं।

विवाद का तीसरा बिंदु रैदास का जन्म स्थान है। इस संबंध में भी रैदासी संप्रदाय के अनुयायियों में मतभेद है। कोई इनका जन्म पश्चिमी उत्तर प्रदेश में बतलाता है तो कोई गुजरात और राजस्थान। रैदासी रामायण की चौपाई - *'काशी ढिग माड़ुर स्थाना, शुद वरन करत गुजराना। माड़ुर नगर लीन अवतारा, रविदास शुभ नाम हमारा।।'* के आधार पर यह खींच-तान काशी से राजस्थान तक चलती रहती है। डॉ. पद्म गुरुचरन सिंह, डॉ. काशीनाथ उपाध्याय और डॉ. वीरेंद्र सेठी ने इस पर विस्तारपूर्वक लिखा है। विभिन्न आग्रहों के बावजूद अब वाराणसी के पास स्थित सीर गोवर्धनपुर को रैदास के जन्मस्थान के रूप में मान्यता दी गई है। इसका साक्ष्य रैदास वाणी में भी मिलता है।

रैदास के माता-पिता, पत्नी, संतान आदि के नामों पर भी विवाद की छाया है। पिता का नाम राधोदास, राधवदास, रग्घू, राहू, संतोखदास, मानदास, मां का नाम धुरबिनिया, करमा, कर्माबाई, कलसीदेवी, पत्नी - लोना, पुत्र - विजयदास और बहिन - रविदासी। रैदास के वंश संबंधी अधिकतम जानकारी जो अब तक उपलब्ध है, उसके अनुसार भी रैदास के वंश को निश्चित कर पाना संभव नहीं है। रैदासी संप्रदाय में प्रचलित जनश्रुतियाँ और हमारे पुरातन साहित्य के उल्लेख अलग-अलग बातें कहते हैं।

आश्चर्य की बात है कि इस सब विवादों के बीच रैदास जी की जाति को लेकर किसी को कोई अस्पष्टता नहीं हुई। रैदास जाति से चर्मकार थे। यह सबने असंदिग्ध रूप से बताया, परंपरा ने, प्रमाण ने और स्वयं रैदास जी ने। व्यक्ति की जाति विशेष को लेकर यह स्पष्टता हिंदू समाज व्यवस्था का सबसे बड़ा व्यंग्य है। *'कह रैदास खलास चमारा। जो सहरू सो मीतु हमारा।'* जैसी अपनी अनेक बानियों में रैदास ने बार-बार पूरे आत्मविश्वास के साथ अपनी जाति की घोषणा की। ऊँच-नीच और छुआ-छूत की इस घृणा एवं भेदमूलक व्यवस्था का उत्तर रैदास ने साधना से दिया। सकर्मक सृजन और आचरण की पवित्रता से दिया। मानव मात्र के लिए प्रेम, विश्वास और विनम्रता से दिया। इसीलिए रैदास को इस देश की संत परंपरा में स्थान मिला। जाति, धर्म, भाषा और भूगोल की सीमाओं से परे देश भर में उनके अनुयायी बने।

रैदास बचपन से ही सत्संगी और सेवा भावी थे। भक्ति भावना उनमें मूलभूत थी लेकिन भक्ति के साथ-साथ वे अपने काम में पूरी लगन और आस्था रखते थे। उनकी कुटिया में संतों का हमेशा स्वागत रहता था। अपने समय के दूसरे संत कवियों की भाँति रैदास भी बहुश्रुत व्यक्ति थे। उन्होंने अपना पूरा ज्ञान साधु-सत्संग, लोक दर्शन, देशाटन और चिंतन-मनन द्वारा अर्जित किया था। यह मसि कागद कलम के बिना आगे बढ़ने वाली परंपरा थी। आधुनिक शिक्षा की शब्दावली में 'साक्षर' न होकर भी ये अज्ञानी नहीं थे। इन्होंने अपने समय की विडंबनाओं को गहराई से पढ़ा था। निरंतर सत्संग और आत्म-चिंतन के माध्यम से ये भारत की मौलिक आध्यात्मिक परंपरा में निष्णात हुए थे। पोथियों के ज्ञान से परे सहज लोक चेतना के दृष्टा बनकर ये जीवन में भक्ति का नया संस्कार भर रहे थे। रैदास जी कहते हैं -

'चलि मन हरि चटसाल पढ़ाऊँ।
गुरु की सांटि ज्ञान का अक्षर,बिसरत सहज समाधि लगाऊँ।।
प्रेम की पाटी, सुरति कर लेखनि, दर्द-मंझ लिखि आँक दिखाऊँ।।'

'प्रहलाद चरित' में वे स्पष्ट कहते हैं कि मैंने राम नाम के अतिरिक्त कुछ और नहीं पढ़ा है -

'हौं पढयौ राम को नाम, आन हिरदै नहिं आनौ।
और हूं कछू न जानों, राम नाम हिरदै नहिं छाँड़ो।।'

पंद्रहवीं का भारत अनेक प्रकार के संघर्ष और संत्रासों का साक्षी था।बाहरी विधर्मी सत्ताधीशों की मनमानी चरम पर थी। अपने धार्मिक प्रतीकों और परंपराओं का घोषणापूर्वक विध्वंस और निरादर किया जा रहा था। इस दुस्समय में जन साधारण के लिए विद्रोह और स्वीकारदोनों ही कठिन थे। आंतरिक आक्रोश, असहायता, निराशा और दीनता के इस भँवर में सिवाय ईश्वरीय आस्था के मन को शांति देने वाला और कोई सहारा न था। *'त्राहि-त्राहि त्रिभुवन पति पावनअतिशय शूल सकल बलि जाऊँ*जैसे शब्दों से रैदास ने अपने समाज की इस आर्त पुकार को वाणी दी है।

रैदास एक ओर आस्था के अवलंब के रूप में त्रिभुवनपति का स्मरण कर रहे थे तो दूसरी ओर उनका दर्द अपने समय और समाज की रुग्ण व्यवस्था को लेकर भी था जो इनसान-इनसान में फ़र्क करती थी। वे कहते हैं -*'हम अपराधी नीच घर जन्में, कुटंब लोग हाँसी रे।'* लेकिन रैदास पीडित और अपमानित होकर रोने वाले कवि नहीं है। उन्होंने पूरी मुखरता से धर्म और समाज कीइन बेड़ियों और रूढ़ियों के प्रति विद्रोह किया-

'जात-पाँत के फेर मंहि, उरझि रहे सब लोग।

मानुषता को खात है, रैदास जाति कर रोग।।'

उन्होंने स्पष्ट घोषणा की कि केवल जाति विशेष में जन्म के कारण ऊँच-नीच नहीं किया जा सकता, क्योंकि मनोवांछित जन्म लेना किसी के बस में नहीं। व्यक्ति के इह-लौकिक कर्म ही उसके श्रेष्ठताया निकृष्टता को निर्धारित करते हैं -

'रैदास एक ही बूँद सौं, सब ही भयों वित्थार।
मूरिख है जो करत हैं वरन अवरन विचार।।
रैदासएक हि नूर ते जिमि उपज्यो संसार।
ऊँच-नीच किहि विध भये, बाहमन और चमार।।
रैदास जन्म के कारणै, होत न कोई नीच।
नर को नीच करि डारि हैं, औछे करम की कीच।।'

रैदास ने हिंदू-मुस्लिम एकता एवं समन्वय की बात कही। उनका मानना था लोग राम-रहीम, वेद-कुरान को लोग समान सम्मान दें -

'कृष्णा-करीम, राम-हरि, राघव, जब लग एक न पेशा
वेद-कतेब-कुरान-पुरातन सहज एक नहीं वेशा।।'

उनकी दृष्टि में सबको बनाने वाला 'सिरजनहार' एक ही है। उस एक ही बूँद का विस्तार यह सारा संसार है। प्रत्येक व्यक्ति की आत्मा में उसी परमात्मा का अंश विद्यमान है, फिर किस आधार पर ब्राहमण को श्रेष्ठ तथा शूद्र को निकृष्ट ठहराया जाए। जाति और वर्ण व्यवस्था का विरोध करते हुए उन्होंने इसकी युगानुरूप नई व्याख्या प्रस्तुत की। वे कहते हैं -

'ऊँचे कुल के कारणै ब्राहमन कोय न होय।
जउ जानहि ब्रहम आत्मा, रैदास कहि ब्राहमण सोय।
दीन-दुखी के हेत जउ वारै अपने प्रान।
'रैदास' उह नर सूर कौ, साँचा छत्री जान।।
'रैदास' वैस सोई जानिये, जउ सतकार कमाय।
पून कमाई सदा लहै, लौटे सर्वत सुखाय।।
साँची हाटी बैठि करि, सौदा साँचा देई।

तकड़ी तौले साँच की, रैदास वैस है सोई।।
'रैदास' जउ अति अपवित, सोई सूदर जान।
जउ कुकरमी असुधजन, तिन्ह ही सूदर मान।।'

इसके अलावा संत रैदास ने मांसाहार, अनैतिकता, धनलिप्सा, दुराचरण आदि तमाम बुराइयों का विरोध करते हुए शुचिता, नैतिकता, विनम्रता और सकर्मक आध्यात्मिकता का रास्ता बतलाकर एक नई सामाजिक क्रांति का सूत्रपात किया। उनका स्पष्ट कहना है -

'का मथुरा का द्वारका, का कासी हरिद्वार।
रैदासखोजा दिल आपना, तउ मिलिया दिलदार।।'

संत रैदास का संपूर्ण जीवन और काव्य शाश्वत मानवीय एवं आध्यात्मिक चेतना का स्रोत है। भक्ति काव्य के प्रखरचेता संत कबीर ने *'संतनि में रविदास संत'* कहकर उनके प्रति सम्मान व्यक्त किया है। मीरां के तो वे आत्मीय गुरु हैं ही जिनके विश्वास के साथ वे ज़हर का प्याला पी गईं। रैदास जहाँ भी रहे उनके अनुयायी बनते गए, आंदोलन खड़े हुए, उनकी रैदासी परंपरा बनती गई। आज भी यह परंपरा पूर्ण आत्मगौरव के साथ उत्तर प्रदेश, राजस्थान, महाराष्ट्र, हरियाणा, दिल्ली, पंजाब और विदेशों तक विद्यमान है। सिखों के आदि ग्रंथ, नाभादास द्वारा रचित भक्तमाल और संत साहित्य के विविध संकलनों में गुरु रैदास जी के पद और बानियाँ संकलित हैं। बनारस में स्थित रविदास मंदिर में आज भी उनका जन्मदिन किसी बड़े सामाजिक उत्सव की तरह मनाया जाता है। देश-विदेश में रह रहे रैदासी और अन्य संगतों-समुदायों के लोग इसमें उल्लासपूर्वक सम्मिलित होते हैं।

रैदास कुल लगभग 120 साल जिए। इस लंबे जीवन को उन्होंने अपने आचरण से बहुत बड़ा और गहरा भी बनाया। जो कुछ उन्होंने अपनी बानियों में कहा उसे पहले खुद जिया भी। उनके काव्य की वैचारिक पीठिका वृहत्तर लोक-सरोकारों से संवाद करती है उसका अपना सामाजिक और लोकतांत्रिक महत्व है जिसकी प्रासंगिकता सम-सामयिक संदर्भों में असंदिग्ध है।

अपने जीवन को अपना संदेश बनाने बाले इस महात्मा की वाणी का असर कई सदियों बाद भारत के राष्ट्रपिता महात्मा गांधी जी के जीवन संदेश तक जाता दिखाई देता है। वैसे तो रैदास की रचनाओं का एक-एक अक्षर मोती सरीखा है लेकिन उनके जीवन और संदेश का सारांश उनकी एक मात्र मान्यता *"मन चंगा तो कठौती में गंगा"* में निहित है। आचरण की शुचिता किसी आडंबर की मोहताज नहीं है। श्रम के प्रति आस्था किसी भी पूजा से बड़ी पूजा है। मुझे लगता है कि रैदास का पूरा साहित्य भी किसी वजह से विस्मृत हो जाए, तो भी उनकी यही एक उक्ति विश्व मानवता को उनके जीवन का संदेश देने के लिए पर्याप्त होगी। ▪▪▪

संदर्भ -

- मैनी धर्मपाल: रैदास - भारतीय साहित्य के निर्माता, साहित्य अकादेमी, नई दिल्ली, 1979
- सिंह, शुकदेव : रैदास वाणी, राधाकृष्ण, नई दिल्ली, 2003
- सिंह, इंद्रराज : संत रविदास, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, 1986
- अज्ञात : रैदास जी की बानी, वेलवेडियर प्रेस, इलाहाबाद, 1948
- वैद्य शिवमंगल राम: संत रविदास - समतावादी संत,मानवतावादी दर्शन
- Callewaert M. Winand & Peter G. Freidlander: The Life and Works of Raidas, Manohar Publishers, New Delhi, 1992
- Ravidas: Indian mystic and poet

<https://www.britannica.com/biography/Ravidas>

- Saint Ravidas: The Mystic Poet-Saint of the Bhakti Movement <https://plutusias.com/saint-ravidas-the-mystic-poet-saint-of-the-bhakti-movement/#:~:text=The%20Adi%20Granth%20and%20the,intervention%20in%20his%20spiritual%20journey>